आगमों की वाचनाएँ

✪ डॉ. सागरमल जैन

तीर्थंकरों की अर्थरूप वाणी गणधरों एवं स्थविरों के द्वारा सूत्रागम रूप में ग्रथित की गई। उस सूत्रागम की भी जब पूर्णतः स्मृति नहीं रह सकी, तो समय-समय पर योग्य संतों की सन्निधि में आगमों की वाचनाएँ हुई। इनमें आगमों को सुरक्षित एवं सम्पादित किया गया। पाटलिपुत्र, कुमारीपर्वत, मथुरा, वल्लभी एवं पुनः वल्लभी में हुई पाँच आगम-वाचनाओं का परिचय जैन धर्म-दर्शन के शिखरायमाण मनीषी विद्वान् डॉ. सागरमल जी जैन के आलेख में प्रस्तुत है। यह आलेख उनके अभिनन्दन ग्रन्थ के आगम खण्ड में प्रकाशित लेख ''अर्द्धमागधी आगम-साहित्य : एक विमर्श' में से संकलित है।

—सम्पादक

यह सत्य है कि वर्तमान में उपलब्ध श्वेताम्बर मान्य अर्धमागधी आगमों के अन्तिम स्वरूप का निर्धारण वल्लभी वाचना में वी. नि. संवत् ९८० या ९९३ में हुआ, किन्तु उसके पूर्व भी आगमों की वाचनाएँ तो होती रही हैं। जो ऐतिहासिक साक्ष्य हमें उपलब्ध हैं उनके अनुसार अर्धमागधी आगमों की पाँच वाचनाएँ होने के उल्लेख प्राप्त होते हैं।

प्रथम वाचना

प्रथम वाचना महावीर के निर्वाण के १६० वर्ष पश्चात् हुई। परम्परागत मान्यता तो यह है कि मध्यदेश में द्वादशवर्षीय भीषण अकाल के कारण कुछ मुनि काल-कवलित हो गये और कुछ समुद्र के तटवर्ती प्रदेशों की ओर चले गये। अकाल की समाप्ति पर वे मुनिगण वापस आए तो उन्होंने पाया कि उनका आगम ज्ञान अंशतः विस्मृत एवं विशृंखलित हो गया है और कहीं–कहीं पाठभेद हो गया है। अतः उस युग के प्रमुख आचार्यों ने पाटलिपुत्र में एकत्रित होकर आगमज्ञान को व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया। दृष्टिवाद और पूर्व साहित्य का कोई विशिष्ट ज्ञाता वहाँ उपस्थित नहीं था। अतः ग्यारह अंग तो व्यवस्थित किये गये, किन्तु दृष्टिवाद और उसमें अन्तर्निहित साहित्य को व्यवस्थित नहीं किया जा सका, क्योंकि उसके विशिष्ट ज्ञाता भद्रबाहु उस समय नेपाल में थे। संघ की विशेष प्रार्थना पर उन्होंने स्थूलिभद्र आदि कुछ मुनियों को पूर्वसाहित्य की वाचना देना स्वीकार किया। स्थूलिभद्र भी उनसे दस पूर्वों तक का ही अध्ययन अर्थ सहित कर सके और शेष चार पूर्वों का मात्र शाब्दिक ज्ञान ही प्राप्त कर पाये।

इस प्रकार पाटलिपुत्र की वाचना में द्वादश अंगों को सुव्यवस्थित करने का प्रयत्न अवश्य किया गया, किन्तु उनमें एकादश अंग ही सुव्यवस्थित किये जा सके। दृष्टिवाद और उसमें अन्तर्भुक्त पूर्व साहित्य को पूर्णतः सुरक्षित नहीं किया जा सका और उसका क्रमशः विलोप होना प्रारम्भ हो गया। फलतः उसकी विषय वस्तु को लेकर अंगबाह्य ग्रन्थ निर्मित किये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाने लगे।

द्वितीय वाचना

आगमों की द्वितीय वाचना ई.पू. द्वितीय शताब्दी में महावीर के निर्वाण के लगभग ३०० वर्ष पश्चात् उड़ीसा के कुमारी पर्वत पर सम्राट् खारवेल के काल में हुई थी। इस वाचना के संदर्भ में विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है–मात्र यही ज्ञात होता है कि इसमें श्रुत के संरक्षण का प्रयत्न हुआ था। वस्तुत: उस युग में आगमों के अध्ययन-अध्यापन की परम्परा गुरु–शिष्य के माध्यम से मौखिक रूप में ही चलती थी। अत: देशकालगत प्रभावों तथा विस्मृति-दोष के कारण उसमें स्वाभाविक रूप से भिन्नता आ जाती थी। अत: वाचनाओं के माध्यम से उनके भाषायी स्वरूप तथा पाठभेद को सुव्यवस्थित किया जाता था। कालक्रम में जो स्थविरों के द्वारा नवीन ग्रन्थों की रचना होती थी, उस पर भी विचार करके उन्हें इन्हीं वाचनाओं में मान्यता प्रदान की जाती थी। इसी प्रकार परिस्थितिवश आचार–नियमों में एवं उनके आगमिक संदर्भों की व्याख्या में जो अन्तर आ जाता था, उसका निराकरण भी इन्हीं वाचनाओं में किया जाता था। खण्डगिरि पर हुई इस द्वितीय वाचना में ऐसे किन विवादों का समाधान खोजा गया था– इसकी प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं है।

तृतीय वाचना

आगमों की तृतीय वाचना वी.नि. संवत् ८२७ अर्थात् ई. सन् की तीसरी शताब्दी में मथुरा में आर्य स्कंदिल के नेतृत्व में हुई। इसलिए इसे माथुरी वाचना या स्कन्दिली वाचना के नाम से भी जाना जाता है। माथुरी वाचना के संदर्भ में दो प्रकार की मान्यताएँ नन्दीचूर्णि में हैं। प्रथम मान्यता के अनुसार दुर्भिक्ष के अनन्तर सुकाल होने के पश्चात् आर्य स्कन्दिल की अध्यक्षता में शेष रहे मुनियों की स्मृति के आधार पर कालिकसूत्रों को सुव्यवस्थित किया गया है। अन्य कुछ का मन्तव्य यह है कि इस काल में सूत्र नष्ट नहीं हुआ था, किन्तु अनुयोगधर स्वर्गवासी हो गये थे। अत: एक मात्र जीवित स्कन्दिल ने अनुयोगों का पुन: प्रवर्तन किया।

चतुर्थ वाचना

चतुर्थ वाचना तृतीय वाचना के समकालीन ही है। जिस समय उत्तर, पूर्व और मध्य क्षेत्र में विचरण करने वाला मुनिसंघ मथुरा में एकत्रित हुआ, उसी समय दक्षिण–पश्चिम में विचरण करने वाला मुनिसंघ वल्लभी (सौराष्ट्र) में आर्य नागार्जुन के नेतृत्व में एकत्रित हुआ। इसे नागार्जुनीय वाचना भी कहते हैं।

आर्य स्कन्दिल की माथुरी वाचना और आर्य नागार्जुन की वल्लभी वाचना समकालिक हैं। नन्दीसूत्र स्थविरावली में आर्य स्कन्दिल और नागार्जुन के मध्य आर्य हिमवन्त का उल्लेख है। इससे यह फलित होता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि आर्य स्कन्दिल और नागार्जुन समकालिक ही रहे होंगे। नन्दी स्थविरावली में आर्य स्कन्दिल के संदर्भ में यह कहा गया है कि उनका अनुयोग आज भी दक्षिणार्द्ध भरत क्षेत्र में प्रचलित है। इसका एक तात्पर्य यह भी हो सकता है कि उनके द्वारा सम्पादित आगम दक्षिण भारत में प्रचलित थे। ऐतिहासिक साक्ष्यों से यह ज्ञात होता है कि उत्तर भारत के निर्ग्रन्थ संघ के विभाजन के फलस्वरूप जिस यापनीय सम्प्रदाय का विकास हुआ था उसमें आर्य स्कन्दिल के द्वारा सम्पादित आगम ही मान्य किये जाते थे और इस यापनीय सम्प्रदाय का प्रभाव क्षेत्र मध्य और दक्षिण भारत था। आचार्य पाल्यकीर्ति शाकटायन ने तो स्त्री-निर्वाण प्रकरण में स्पष्ट रूप से मथुरागम का उल्लेख किया है। अत: यह स्पष्ट है कि यापनीय सम्प्रदाय जिन आगमों को मान्य करता था, वे माथुरी वाचना के आगम थे। मूलाचार, भगवती-आराधना आदि यापनीय आगमों में वर्तमान में श्वेताम्बर मान्य आचारांग, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, कल्प, व्यवहार, संग्रहणीसूत्रों, निर्युक्तियों आदि की सैकड़ों गाथाएँ आज भी उपलब्ध हो रही हैं। इससे यही फलित होता है कि यापनीयों के पास माथुरी वाचना के आगम थे। हम यह भी पाते हैं कि यापनीय ग्रन्थों में जो आगमों की गाथाएँ मिलती हैं वे न तो अर्धमागधी में हैं, न महाराष्ट्री प्राकृत में, अपितु वे शौरसेनी में हैं। मात्र यही नहीं अपराजित की भगवती-आराधना की टीका में आचारांग, उत्तराध्ययन, कल्पसूत्र, निशीथ आदि से जो अनेक अवतरण दिये हैं वे सभी अर्द्धमागधी में न होकर शौरसेनी में हैं।

इससे यह फलित होता है कि स्कंदिल की अध्यक्षता वाली माथुरी वाचना में आगमों की अर्द्धमागधी भाषा पर शौरसेनी का प्रभाव आ गया था। दूसरे माथुरी वाचना के आगमों के जो भी पाठ भगवती-आराधना की टीका आदि में उपलब्ध होते हैं, उनमें वल्लभी वाचना के वर्तमान आगमों से पाठभेद भी देखा जाता है। साथ ही अचेलकत्व की समर्थक कुछ गाथाएँ और गद्यांश भी पाये जाते हैं। कुन्दकुन्द के ग्रन्थों में अनुयोगद्वारसूत्र, प्रकीर्णकों, निर्युक्ति आदि की कुछ गाथाएँ क्वचित् पाठभेद के साथ मिलती हैं—संभवत:उन्होंने ये गाथाएँ यापनीयों के माथुरी वाचना के आगमों से ही ली होगीं।

एक ही समय में आर्य स्कन्दिल द्वारा मथुरा में और नागार्जुन द्वारा वल्लभी में वाचना किये जाने की एक संभावना यह भी हो सकती है कि दोनों में किन्हीं बातों को लेकर मतभेद थे। संभव है कि इन मतभेदों में वस्त्र—पात्र आदि संबंधी प्रश्न भी रहे हों। पं० कैलाशचन्द्रजी ने जैन साहित्य का इतिहास —पूर्व पीठिका (पृ.५००) में माथुरी वाचना की समकालीन वल्लभी वाचना के प्रमुख रूप में देवर्द्धिगणी का उल्लेख किया है, यह उनकी भ्रान्ति है। वास्तविकता तो यह है कि माथुरी वाचना का नेतृत्व आर्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कन्दिल और वल्लभी की प्रथम वाचना का नेतृत्व आर्य नागार्जुन कर रहे थे और ये दोनों समकालिक थे, यह बात हम नन्दीसूत्र के प्रमाण से पूर्व में ही कह चुके हैं। यह स्पष्ट है कि आर्य स्कन्दिल और नागार्जुन की वाचना में मतभेद था।

पं० कैलाशचन्द्र जी ने यह प्रश्न उठाया है कि यदि वल्लभी वाचना नागार्जुन की थी तो देवर्द्धि ने वल्लभी में क्या किया? साथ ही उन्होंने यह भी कल्पना कर ली कि वादिवेतालशान्तिसूरि वल्लभी की वाचना में नागार्जुनीयों का पक्ष उपस्थित करने वाले आचार्य थे। हमारा यह दुर्भाग्य है कि दिगम्बर विद्वानों ने श्वेताम्बर साहित्य का समग्र एवं निष्पक्ष अध्ययन किये बिना मात्र यत्र-तत्र उद्धृत या अंशत: पठित अंशों के आधार पर अनेक भ्रान्तियाँ खड़ी कर दीं। इसके प्रमाण के रूप में उनके द्वारा उद्धृत मूल गाथा में ऐसा कहीं उल्लेख ही नहीं है कि शान्तिसूरि वल्लभी वाचना के समकालिक थे। यदि हम आगमिक व्याख्याओं को देखें तो स्पष्ट हो जाता है कि अनेक वर्षों तक नागार्जुनीय और देवर्द्धि की वाचनाएँ साथ–साथ चलती रही हैं, क्योंकि इनके पाठान्तरों का उल्लेख मूल ग्रन्थों में कम और टीकाओं में अधिक हुआ है।

पंचम वाचना

वी.नि. के ९८० वर्ष पश्चात् ई. सन् की पाँचवी शती के उत्तरार्द्ध में आर्य स्कन्दिल की माथुरी वाचना और आर्य नागार्जुन की वल्लभी वाचना के लगभग १५० वर्ष पश्चात् देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण की अध्यक्षता में पुन: वल्लभी में एक वाचना हुई। इस वाचना में मुख्यत: आगमों को पुस्तकारुढ़ करने का कार्य किया गया। ऐसा लगता है कि इस वाचना में माथुरी और नागार्जुनीय दोनों वाचनाओं को समन्वित किया गया है और जहां मतभेद परिलक्षित हुआ वहाँ ''नागार्जुनीयास्तु पठन्ति'' ऐसा लिखकर नागार्जुनीय पाठ को भी सम्मिलित किया गया है।

समीक्षा

प्रत्येक वाचना के संदर्भ में प्राय: यह कहा जाता है कि मध्यदेश में द्वादशवर्षीय दुष्काल के कारण श्रमणसंघ समुद्रतटीय प्रदेशों की ओर चला गया और वृद्ध मुनि, जो इस अकाल में लम्बी यात्रा न करे सके, कालगत हो गये। सुकाल होने पर जब मुनिसंघ लौटकर आया तो उसने यह पाया कि उनके श्रुतज्ञान में विस्मृति और विसंगति आ गयी है। प्रत्येक वाचना से पूर्व अकाल की यह कहानी मुझे बुद्धिगम्य नहीं लगती है। मेरी दृष्टि में प्रथम वाचना में श्रमण संघ के विशृंखलित होने का कारण अकाल की अपेक्षा मगध राज्य में युद्ध से उत्पन्न अशांति और अराजकता ही थी, क्योंकि उस समय नन्दों के अत्याचारों एवं चन्द्रगुप्त मौर्य के आक्रमण के कारण मगध में अशांति थी। उसी के फलस्वरूप श्रमण संघ सुदूर समुद्रीतट की ओर या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नेपाल आदि पर्वतीय क्षेत्र की ओर चला गया था। भद्रबाहु की नेपालयात्रा का भी संभवत: यही कारण रहा होगा।

जो भी उपलब्ध साक्ष्य हैं उनसे यह फलित होता है कि पाटलिपुत्र की वाचना के समय द्वादश अंगों को ही व्यवस्थित करने का प्रयत्न हुआ था। उसमें एकादश अंग सुव्यवस्थित हुए और बारहवें दृष्टिवाद, जिसमें अन्यदर्शन एवं महावीर के पूर्व पार्श्वनाथ की परम्परा का साहित्य समाहित था, का संकलन नहीं किया जा सका। इसी संदर्भ में स्थूलिभद्र के द्वारा भद्रबाहु के सान्निध्य में नेपाल जाकर चतुर्दश पूर्वों के अध्ययन की बात कही जाती है। किन्तु स्थूलिभद्र भी मात्र दस पूर्वों का ही ज्ञान अर्थ सहित ग्रहण कर सके, शेष चार पूर्वों का केवल शाब्दिक ज्ञान ही प्राप्त कर सके। इसका फलितार्थ यही है कि पाटलिपुत्र की वाचना में एकादश अंगों का ही संकलन और सम्पादन हुआ था। किसी भी चतुर्दश पूर्वविद् की उपस्थिति नहीं होने से दृष्टिवाद के संकलन एवं सम्पादन का कार्य नहीं किया जा सका। उपांग साहित्य के अनेक ग्रन्थ जैसे प्रज्ञापना आदि, छेदसूत्रों में आचारांग, कल्प, व्यवहार आदि तथा चूलिकासूत्रों में नन्दी, अनुयोगद्वार आदि– ये सभी परवर्ती कृति होने से इस वाचना में सम्मिलित नहीं किये गए होंगे। यद्यपि आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन आदि ग्रन्थ पाटलिपुत्र की वाचना के पूर्व के हैं, किन्तु इस वाचना में इनका क्या किया गया, यह जानकारी प्राप्त नहीं है। हो सकता है कि सभी साधु-साध्वियों के लिये इनका स्वाध्याय आवश्यक होने के कारण इनके विस्मृत होने का प्रश्न ही न उठा हो।

पाटलिपुत्र वाचना के बाद दूसरी वाचना उड़ीसा के कुमारी पर्वत (खण्डगिरि) पर खारवेल के राज्य काल में हुई थी। इस वाचना के संबंध में मात्र इतना ही ज्ञात है कि इसमें भी श्रुत को सुव्यवस्थित करने का प्रयत्न किया गया था। संभव है कि इस वाचना में ई.पू. प्रथम शती से पूर्व रचित ग्रन्थों के संकलन और सम्पादन का कोई प्रयत्न किया गया हो।

जहां तक माथुरी वाचना का प्रश्न है, इतना तो निश्चित है कि उसमें ई.सन् की चौथी शती तक के रचित सभी ग्रन्थों के संकलन एवं सम्पादन का प्रयत्न किया गया होगा। इस वाचना के कार्य के संदर्भ में जो सूचना मिलती है, उसमें इस वाचना में कालिकसूत्रों को व्यवस्थित करने का निर्देश है। नन्दिसूत्र में कालिकसूत्र को अंगबाह्य, आवश्यक व्यतिरिक्त सूत्रों का ही एक भाग बताया गया है। कालिकसूत्रों के अन्तर्गत उत्तराध्ययन, ऋषिभाषित, दशाश्रुत, कल्प, व्यवहार, निशीथ तथा वर्तमान में उपांग के नाम से अभिहित अनेक ग्रन्थ आते हैं। हो सकता है कि अंग सूत्रों की जो पाटलिपुत्र की वाचना चली आ रही थी वह मथुरा में मान्य नहीं हो, किन्तु उपांगों में से कुछ को तथा कल्प आदि छेदसूत्रों को सुव्यवस्थित किया गया हो। किन्तु यापनीय ग्रन्थों की टीकाओं में जो माथरी वाचना के आगमों के उद्धरण मिलते हैं उन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर जो शौरसेनी का प्रभाव दिखता है, उससे ऐसा लगता है कि माथुरी वाचना में न केवल कालिक सूत्रों का अपितु उस काल तक रचित सभी ग्रन्थों के संकलन का काम किया गया था। ज्ञातव्य है कि यह माथुरी वाचना अचेलता की पोषक यापनीय परम्परा में भी मान्य रही है। यापनीय ग्रन्थों की व्याख्याओं एवं टीकाओं में इस वाचना के आगमों के अवतरण तथा इन आगमों के प्रामाण्य के उल्लेख मिलते हैं। आर्य शाकटायन ने स्त्री-निर्वाण प्रकरण एवं अपने व्याकरण की स्वोपज्ञटीका में न केवल मथुरा आगम का उल्लेख किया है, अपितु उनकी अनेक मान्यताओं का निर्देश भी किया है तथा अनेक अवतरण भी दिये हैं। इसी प्रकार भगवती आराधना पर अपराजित की टीका में भी आचारांग, उत्तराध्ययन, निशीथ के अवतरण भी पाये जाते हैं, यह हम पूर्व में कह चुके हैं।

आर्य स्कंदिल की माथुरी वाचना वस्तुत: उत्तर भारत के निर्ग्रन्थ संघ के सचेल–अचेल दोनों पक्षों के लिये मान्य थी और उसमें दोनों ही पक्षों के सम्पोषक साक्ष्य उपस्थित थे। यहाँ यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि यदि माथुरी वाचना उभय पक्षों को मान्य थी तो फिर उसी समय नागार्जुन की अध्यक्षता में वल्लभी में वाचना करने की क्या आवश्यकता थी। मेरी मान्यता है कि अनेक प्रश्नों पर स्कंदिल और नागार्जुन में मतभेद रहा होगा। इसी कारण से नागार्जुन को स्वतन्त्र वाचना करने की आवश्यकता पड़ी।

यह सत्य है कि वल्लभी में न केवल आगमों को पुतकारूढ़ किया गया, अपितु उन्हें संकलित व सम्पादित भी किया गया, किन्तु यह संकलन एवं सम्पादन निराधार नहीं था। न तो दिगम्बर परम्परा का यह कहना उचित है कि वल्लभी में श्वेताम्बरों ने अपनी मान्यता के अनुरूप आगमों को नये सिरे से रच डाला और न यह कहना ही समुचित होगा कि वल्लभी में जो आगम संकलित किये गये वे अक्षुण्ण रूप से वैसे ही थे जैसे– पाटलिपुत्र आदि की पूर्व वाचनाओं में उन्हें संकलित किया गया था। यह सत्य है कि आगमों की विषयवस्तु के साथ–साथ अनेक आगम ग्रन्थ भी कालक्रम में विलुप्त हुए हैं। वर्तमान आगमों का यदि सम्यक् प्रकार से विश्लेषण किया जाय तो इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है। ज्ञातव्य है कि देवर्द्धि की वल्लभी वाचना में न केवल आगमों को पुस्तकारूढ़ किया गया है, अपितु उन्हें सम्पादित भी किया गया है। इस सम्पादन के कार्य में उन्होंने आगमों की अवशिष्ट उपलब्ध विषयवस्तु को अपने ढंग से पुन: वर्गीकृत भी किया था और परम्परा या अनुश्रुति से प्राप्त आगमों के वे अंश जो उनके पूर्व की वाचनाओं में समाहित नहीं थे, उन्हें समाहित भी किया। उदाहरण के रूप में ज्ञाताधर्मकथा में सम्पूर्ण द्वितीय श्रुतस्कन्ध के दस वर्ग और अध्ययन इसी वाचना में समाहित किये गये हैं, क्योंकि श्वेताम्बर, यापनीय एवं दिगम्बर परम्परा के प्रतिक्रमणसूत्र एवं अन्यत्र उसके उन्नीस अध्ययनों का ही उल्लेख मिलता है। प्राचीन ग्रन्थों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में द्वितीय श्रुतस्कन्ध के दस वर्गों का कहीं कोई निर्देश नहीं है।

इसी प्रकार अन्तकृद्दशा, अनुत्तरौपपातिकदशा और विपाकदशा के संदर्भ में स्थानांग में जो दस–दस अध्ययन होने की सूचना है उसके स्थान पर इनमें भी जो वर्गों की व्यवस्था की गई वह देवर्द्धि की ही देन है। उन्होंने इनके विलुप्त अध्यायों के स्थान पर अनुश्रुति से प्राप्त सामग्री जोड़कर इन ग्रन्थों को नये सिरे से व्यवस्थित किया था।

यह एक सुनिश्चित सत्य है कि आज प्रश्नव्याकरण की आस्रव–संवर द्वार संबंधी जो विषय वस्तु उपलब्ध है वह किसके द्वारा संकलित व सम्पादित है यह निर्णय करना कठिन कार्य है, किन्तु यदि हम यह मानते हैं कि नन्दीसूत्र के रचयिता देवर्द्धि न होकर देव वाचक हैं, जो देवर्द्धि से पूर्व के हैं तो यह कल्पना भी की जा सकती है कि देवर्द्धि ने आस्रव व संवर द्वार संबंधी विषयवस्तु को लेकर प्रश्नव्याकरण की प्राचीन विषयवस्तु का जो विच्छेद हो गया था, उसकी पूर्ति की होगी। इस प्रकार ज्ञाताधर्म से लेकर विपाकसूत्र तक के छः अंग आगमों में जो आंशिक या सम्पूर्ण परिवर्तन हुए हैं, वे देवर्द्धि के द्वारा ही किये हुए माने जा सकते हैं। यद्यपि यह परिवर्तन उन्होंने किसी पूर्व परम्परा या अनुश्रुति के आधार पर ही किया होगा, यह विश्वास किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त देवर्द्धि ने एक यह महत्त्वपूर्ण कार्य भी किया कि जहां अनेक आगमों में एक ही विषयवस्तु का विस्तृत विवरण था वहाँ उन्होंने एक स्थल पर विस्तृत विवरण रखकर अन्यत्र उस ग्रन्थ का निर्देश कर दिया। हम देखते हैं कि भगवती आदि कुछ प्राचीन स्तरों के आगमों में भी, उन्होंने प्रज्ञापना, नन्दी, अनुयोगद्वार जैसे परवर्ती आगमों का निर्देश करके आगमों में विषय वस्तु के पुनरावर्तन को कम किया। इसी प्रकार जब एक ही आगम में कोई विवरण बार–बार आ रहा था तो उस विवरण के प्रथम शब्द का उल्लेख कर उसे संक्षिप्त बना दिया। इसके साथ ही उन्होंने कुछ महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ जो यद्यपि परवर्तीकाल की थीं, उन्हें भी आगमों में दे दिया जैसे स्थानांगसूत्र में सात निह्नवों और सात गणों का उल्लेख। इस प्रकार वल्लभी की वाचना में न केवल आगमों को पुस्तकारूढ़ किया गया, अपितु उनकी विषयवस्तु को सुव्यवस्थित और सम्पादित भी किया गया। संभव है कि इस संदर्भ में प्रक्षेप और विलोपन भी हुआ होगा, किन्तु यह सभी अनुश्रुत या परम्परा के आधार पर किया गया था, अन्यथा आगमों को मान्यता न मिलती।

इसके अतिरिक्त इन वाचनाओं में वाचना-स्थलों की अपेक्षा से आगमों के भाषिक स्वरूप में भी परिवर्तन हुआ है। उदाहरण के रूप में आगम पटना तथा उड़ीसा के कुमारी पर्वत (खण्डगिरि) में सुव्यवस्थित किये गये थे, उनकी भाषा अर्द्धमागधी ही रही, किन्तु जब वे आगम मथुरा और वल्लभी में पुनः सम्पादित किये गये तो उनमें भाषिक परिवर्तन आ गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माथुरी वाचना में जो आगमों का स्वरूप तय हुआ था, उस पर व्यापक रूप से शौरसेनी का प्रभाव आ गया था। दुर्भाग्य से आज हमें माथुरी वाचना के आगम उपलब्ध नहीं हैं, किन्तु उन आगमों के जो उद्धृत अंश उत्तर भारत की अचेल धारा यापनीय संघ के ग्रन्थों में और टीकाओं में उद्धृत मिलते हैं, उनमें हम यह पाते हैं कि भावगत समानता के होते हुए भी शब्दरूपों और भाषिक स्वरूप में भिन्नता है। आचारांग, उत्तराध्ययन, निशीथ, कल्प, व्यवहार आदि से जो अंश भगवती-आराधना की टीका में उद्धृत हैं वे अपने भाषिक स्वरूप और पाठभेद की अपेक्षा से वल्लभी के आगमों से किंचित भिन्न हैं। फिर भी देवर्द्धि को जो आगम-परम्परा से प्राप्त थे,उनका और माथुरी वाचना के आगमों का मूलस्रोत तो एक ही था। हो सकता है कि कालक्रम में भाषा एवं विषयवस्तु की अपेक्षा दोनों में क्वचित् अन्तर आ गये हों। अत: यह दृष्टिकोण भी समुचित नहीं होगा कि देवर्द्धि की वल्लभी वाचना के आगम माथुरी वाचना के आगमों से नितान्त भिन्न थे।

–सचिव, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी
सागर टेण्ट हाउस, नई सड़क, शाजापुर (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org